

धर्ममाकर्ण्य जैनेन्द्रं स्वर्गमोक्षप्रदायकम्। तुष्टौ गर्दभदीर्घौ च संजातौ श्रावकोत्तमौ ॥३७॥
ततो यमो मुनीन्द्रोऽसौ महावैराग्यमण्डितः। जिनोक्तैः शुद्धचारित्रैर्जातः सप्तर्द्धिसंयुतः ॥३८॥
यतोऽसौ ज्ञानलेशेन संजातो गुणभाजनम्। यतो भव्यैः सदाराध्यं जैनं ज्ञानं जगद्धितम् ॥३९॥

स्तोकं ज्ञानमपि प्रसिद्धमहिमा भक्त्या समाराध्य च
जातोऽसौ मुनिसत्तमो गुणनिधिः सप्तर्द्धियुक्तो महान्।
ज्ञात्वेत्थं त्रिजगत्प्रपूज्यजिनपैः प्रोक्तं सुशर्मप्रदं
ज्ञानं निर्वृतिसाधनं शुचितरं सन्तः श्रयन्तु श्रिये ॥४०॥

इति कथाकोशे श्री यममुनेः कथा समाप्ता।

२३. श्रीदृढसूर्यस्य कथा

नत्वा जिनं जगत्पूज्यं लोकालोकप्रकाशकम्। वक्ष्येहं दृढसूर्यस्य वृत्तं विश्वासदायकम् ॥१॥
उज्जयिन्यां महाराजो नगर्या धनपालवाक्। तद्राज्ञी धनवत्याख्या सैकदा निजलीलया ॥२॥

और उनसे धर्म का उपदेश सुना, जो कि स्वर्ग-मोक्ष का देने वाला है। उपदेश सुनकर वे दोनों बहुत प्रसन्न हुए। इसके बाद वे श्रावकधर्म ग्रहण कर अपने स्थान लौट गए ॥२८-३७॥

इधर यमधर मुनि भी अपने चारित्र को दिन दूना निर्मल करने लगे, परिणामों को वैराग्य की ओर खूब लगाने लगे। उसके प्रभाव से थोड़े ही दिनों में उन्हें सातों ऋद्धियाँ प्राप्त हो गई ॥३८॥

अहा! नाममात्र ज्ञान द्वारा भी यम मुनिराज बड़े ज्ञानी हुए, उन्होंने अपनी उन्नति को अन्तिम सीढ़ी पर पहुँचा दिया। इसलिए भव्य पुरुषों को संसार का हित करने वाले जिन भगवान् के द्वारा उपदिष्ट सम्यग्ज्ञान की सदा आराधना करना चाहिए। देखो, यम मुनिराज को बहुत थोड़ा ज्ञान था, पर उसकी उन्होंने बड़ी भक्ति और श्रद्धा के साथ आराधना की। उसके प्रभाव से वे संसार में प्रसिद्ध हुए मुनियों में प्रधान और मान्य हुए और सातों ऋद्धियाँ उन्हें प्राप्त हुई इसलिए सज्जन धर्मात्मा पुरुषों को उचित है कि वे त्रिलोकपूज्य जिनभगवान् द्वारा उपदिष्ट, सब सुखों का देने वाला और मोक्ष-प्राप्ति का कारण अत्यन्त पवित्र सम्यग्ज्ञान प्राप्त करने का यत्न करें ॥३९-४०॥

२३. दृढसूर्य की कथा

लोकालोक के प्रकाश करने वाले, केवलज्ञान द्वारा संसार के सब पदार्थों को जानकर उनका स्वरूप कहने वाले और देवेन्द्रादि द्वारा पूज्य श्री जिनभगवान् को नमस्कार कर मैं दृढसूर्य की कथा लिखता हूँ, जो कि जीवों को विश्वास दिलाने वाली है ॥१॥

उज्जयिनी के राजा जिस समय धनपाल थे, उस समय की यह कथा है। धनपाल उस समय के राजाओं में एक प्रसिद्ध राजा थे। उनकी महारानी का नाम धनवती था। एक दिन धनवती अपनी

वसन्तर्तौ वनं प्राप्ता क्रीडार्थं सुजनैर्वृता। तत्र तस्या गले हारं धनवत्या मनोहरम् ॥३॥
 दृष्ट्वा वसन्तसेनाख्या गणिका धनलम्पटा। किं हारेण विनाऽनेन जीवितं निष्फलं मम ॥४॥
 सञ्चिन्त्येति गृहं गत्वा संस्थिता दुःखमानसा। तदा रात्रौ समागत्य चोरोसौ दृढसूर्यकः ॥५॥
 तां जगाद तदासक्तः किं प्रिये दुःखतः स्थिता। तयोक्तं चेत्समानीय राज्ञीहारं ददासि मे ॥६॥
 तदा जीवाम्यहं धीर नान्यथा त्वं च मे प्रियः। तच्छ्रुत्वा दृढसूर्योसौ तां समुद्धीर्य वल्लभा ॥७॥
 राजगेहं प्रविश्योच्चैर्गृहीत्वा हारमुत्तमम्। निशायां निर्गतः शीघ्रं किं न कुर्वन्ति लम्पटाः ॥८॥
 हारोद्योतेन चोरोसौ यमपाशेन संधृतः। कष्टतः कोट्टपालेन शूले प्रोतो नृपाज्ञया ॥९॥
 प्रभाते धनदत्ताख्यं संगच्छन्तं जिनालये। दृष्ट्वा कण्ठगतः प्राणस्तस्करः श्रेष्ठिनं जगौ ॥१०॥
 त्वं दयालुर्महाधीर जिनपादाब्जषट्पद। महातृषातुरस्योच्चैस्तोयं देहि मम द्रुतम् ॥११॥
 श्रेष्ठी तस्योपकारार्थं संजगादेति शुद्धधीः। वर्षैर्द्वादशभिर्दत्ता विद्या मे गुरुणा मुदा ॥१२॥
 जलार्थं गच्छतः सा मे विस्मृतिं याति साम्प्रतम्। तां धृत्वा यत्नतो विद्या-मागताय ददासि चेत् ॥१३॥

सखियों के साथ वसन्तश्री देखने को उपवन में गई। उसके गले में एक बहुत कीमती रत्नों का हार पड़ा हुआ था। उसे वहीं आई हुए एक वसन्तसेना नाम की वेश्या ने देखा। उसे देखकर उसका मन उसकी प्राप्ति के लिए आकुलित हो उठा। उसके बिना उसे अपना जीवन निष्फल जान पड़ने लगा। वह दुःखी होकर अपने घर लौटी। सारे दिन वह उदास रही। जब रात के समय उसका प्रेमी दृढसूर्य आया तब उसने उसे उदास देखकर पूछा-प्रिये, कहो! कहो!! तुम आज अप्रसन्न कैसी? वसन्तसेना ने उसे अपने लिए इस प्रकार खेदित देखकर कहा-आज मैं उपवन में गई हुई थी। वहाँ मैंने राजरानी के गले में एक हार देखा है। वह बहुत ही सुन्दर है। उसे आप लाकर दें तब ही मेरा जीवन रह सकता है और तब ही आप मेरे सच्चे प्रेमी हो सकते हैं ॥२-४॥

दृढसूर्य हार के लिए चला। वह सीधा राजमहल पहुँचा। भाग्य से हार उसके हाथ पड़ गया। वह उसे लिए हुए राजमहल से निकला। सच है लोभी, लंपटी कौन काम नहीं करते? उसे निकलते ही पहरेदारों ने पकड़ लिया। सबेरा होने पर राजसभा में पहुँचाया गया। राजा ने उसे शूली पर चढ़ाने की आज्ञा दी। वह शूली पर चढ़ाया गया। इसी समय धनदत्त नाम के एक सेठ दर्शन करने को जिनमन्दिर जा रहे थे। दृढसूर्य ने उनके चेहरे और चाल-ढाल से उन्हें दयालु समझ कर उनसे कहा-सेठजी, आप बड़े जिनभक्त और दयावान् हैं, इसलिए आपसे प्रार्थना है कि मैं इस समय बड़ा प्यासा हूँ, सो आप कहीं से थोड़ा सा जल लाकर मुझे पिला दें, तो आपका बड़ा उपकारी रहूँगा। धनदत्त ने उसकी भलाई की इच्छा से कहा-“भाई, मैं जल तो लाता हूँ, पर इस बीच में तुम्हें एक बात करनी होगी। वह यह कि-मैंने कोई बारह वर्ष के कठिन परिश्रम द्वारा अपने गुरु महाराज की कृपा से एक विद्या सीखी है, सो मैं तुम्हारे लिए जल लेने को जाते समय कदाचित् उसे भूल जाऊँ तो उससे मेरा सब श्रम व्यर्थ जायेगा और मुझे बहुत हानि भी उठानी पड़ेगी, इसलिए उसे मैं तुम्हें सौंप जाता हूँ।

तदा तोयं समानीय मया तुभ्यं प्रदीयते। एवं करोमि तेनोक्ते स श्रेष्ठी धर्मतत्त्ववित् ॥१४॥
 तस्मै पञ्चनमस्कारं स्वर्गमोक्षसुखप्रदम्। कथयित्वा गतो धीमान्सर्वेषां हितकारकः ॥१५॥
 स चोरो दृढसूर्यश्च श्रेष्ठिवाक्येषु निश्चलः। तं मंत्रं त्रिजगत्पूतं स्मरन्नुच्चारयन्नपि ॥१६॥
 मृत्वा सौधर्मकल्पेभू-देवो नानर्द्धिमण्डितः। अहो पञ्चनमस्कारैर्जायते किं न देहिनाम् ॥१७॥
 तदा केनापि सम्प्रोक्तं दुर्जनेन महीपतेः। भो देव धनदत्ताख्यः श्रेष्ठी ते न्यायकारकः ॥१८॥
 गत्वा चोरसमीपं च मंत्रं तेन समं व्यधात्। अतोऽस्य मन्दिरे तस्य धनं तिष्ठति निश्चितम् ॥१९॥
 धिग्दुर्जनं दुराचारं वृथा प्राणप्रहारिणम्। सर्वलोकहितानां च सतां यो वक्ति दुर्वचः ॥२०॥
 तच्छ्रुत्वा धनपालाख्यः स भूपः कोपकम्पितः। बन्धनार्थं गृहे तस्य प्रेषयामास किङ्करान् ॥२१॥
 तस्मिन्नेव क्षणे सोपि देवो ज्ञात्वाऽवधीक्षणात्। श्रेष्ठिनो गृहरक्षार्थं शीघ्रमागत्य भक्तितः ॥२२॥
 द्वारपालः स्वयं भूत्वा संस्थितो यष्टिमंडितः। तद्गृहं विशतः क्रूरान्वारयामास किंकरान् ॥२३॥
 कुर्वन्तश्च हठं तत्र भटास्ते दुष्टमानसाः। मायया मारिताः सर्वे तदाऽनेन स्वशक्तितः ॥२४॥
 तत्समाकर्ण्य भूपेन प्रेषिताः बहवो भटाः। तेन तेऽपि तथा सर्वे मारिताः क्षणतस्तराम् ॥२५॥

मैं जब जल लेकर आऊँ तब तुम मुझे वह लौटा देना। यह कहकर परोपकारी धनदत्त स्वर्ग-मोक्ष का सुख देने वाला पंच नमस्कार मंत्र उसे सिखाकर जल लेने को चला गया। वह जल लेकर वापस लौटा, इतने में दृढसूर्य की जान निकल गई, वह मर गया। पर वह मरा नमस्कार मंत्र का ध्यान करता हुआ, उसे सेठ के इस कहने पर पूर्ण विश्वास हो गया था कि वह विद्या महाफल के देने वाली है। नमस्कार मंत्र के प्रभाव से वह सौधर्मस्वर्ग जाकर देव हुआ। सच है-पंच नमस्कारमंत्र के प्रभाव से मनुष्य को क्या प्राप्त नहीं होता? इसी समय किसी एक दुष्ट ने राजा से धनदत्त की शिकायत कर दी कि, महाराज, धनदत्त ने चोर के साथ कुछ गुप्त मंत्रणा की है, इसलिए उसके घर में चोरी का धन होना चाहिए। नहीं तो एक चोर से बातचीत करने का उसे क्या मतलब? ऐसे दुष्टों को और उनके दुराचारों को धिक्कार है, जो व्यर्थ ही दूसरों के प्राण लेने के यत्न में रहते हैं और परोपकार करने वाले सज्जनों को भी जो दुर्वचन कहते रहते हैं ॥५-२०॥

राजा सुनते ही क्रोध के मारे आग बबूला हो गए। उन्होंने बिना कुछ सोचे विचारे धनदत्त को बाँध ले आने के लिए अपने सैनिक को भेजा। इसी समय अवधिज्ञान द्वारा यह हाल देव को, जो कि दृढसूर्य का जीव था, मालूम हो गया। अपने उपकारी को, कष्ट में फँसा देखकर वह उसी समय उज्जयिनी में आया और स्वयं ही द्वारपाल बनकर उसके घर के दरवाजे पर पहरा देने लगा। जब सैनिक धनदत्त को पकड़ने के लिए घर में घुसने लगे तब देव ने उन्हें रोका। पर जब वे हठ करने लगे और जबरन घर में घुसने लगे तब देव ने भी अपनी माया से उन सब को एक क्षण भर में धराशायी कर दिया। राजा ने यह हाल सुनकर और भी बहुत से अपने अच्छे-अच्छे शूरवीरों को भेजा, देव ने उन्हें

तदा रुष्टो महीनाथस्तत्रायातो बलान्वितः। एकेन तेन तच्छीघ्रं बलं सर्वं तथा हतम् ॥२६॥
 नष्टो राजा भयग्रस्तो देवेन भणितस्त्विति। श्रेष्ठिनः शरणं यासि तदा ते जीवितं ध्रुवम् ॥२७॥
 ततो राजा जिनेन्द्राणां मन्दिरे शर्ममन्दिरे। रक्ष रक्षेति संजल्पन् श्रेष्ठिनः शरणं व्रजः ॥२८॥
 श्रेष्ठी तदा विशिष्टात्मा संजगाद सुरं प्रति। कस्त्वं धीर किमर्थं च त्वयेदं निर्मितं वद ॥२९॥
 दृढसूर्यचरो देवः श्रेष्ठिनं तं प्रणम्य च। स्वरूपं प्रकटीकृत्य प्रोवाच मधुरं वचः ॥३०॥
 अहो श्रेष्ठिन् जिनाधीश-चरणार्चनकोविदः। अहं चोरो महापापी दृढसूर्याभिधानकः ॥३१॥
 त्वत्प्रसादेन भो स्वामिन्स्वर्गे सौधर्मसंज्ञके। देवो महर्द्धिको जातो ज्ञात्वा पूर्वभवं सुधीः ॥३२॥
 महोपकारिणस्तेऽत्र रक्षार्थं च समागतः। मयेदं सेवकेनोच्चैः कार्यं सर्वं विनिर्मितम् ॥३३॥
 एवं प्रोक्त्वा महाभक्त्या श्रेष्ठिनं गुणशालिनम्। रत्नादिभिः समभ्यर्च्य स देवः स्वर्गमाप्तवान् ॥३४॥
 स श्रेष्ठी धनदत्ताख्यो जिनभक्तिपरायणः। पूजितश्च नरेन्द्राद्वैधार्मिकः कैर्न पूज्यते ॥३५॥

सर्वे ते धनपालभूपतिमुखा दृष्ट्वा प्रभावं शुभं
 श्रीमत्पञ्चनमस्कृतेश्च नितरां सन्तुष्टसच्चेतसः।

भी धराशायी कर दिया। इससे राजा का क्रोध अत्यन्त बढ़ गया। तब वे स्वयं अपनी सेना को लेकर धनदत्त पर आ चढ़े। पर उस एक ही देव ने उनकी सारी सेना को तीन तरह कर दिया। यह देखकर राजा भय के मारे भगाने लगे। उन्हें भागते हुए देखकर देव ने उनका पीछा किया और वह उनसे बोला— आप कहीं नहीं भाग सकते। आपके जीने का एक उपाय है, आप धनदत्त के आश्रय में जायें और उससे अपने प्राणों की भीख माँगें। बिना ऐसा किए आपकी कुशल नहीं। सुनकर ही राजा धनदत्त के पास जिनमन्दिर गए और उन्होंने सेठ से प्रार्थना की कि—धनदत्त, मेरी रक्षा करो! मुझे बचाओ! मैं तुम्हारे शरण में हूँ। सेठ ने देव को पीछे ही आया हुआ देखकर कहा—तुम कौन हो? और क्यों हमारे महाराज को कष्ट दे रहे हो? देव ने अपनी माया समेटी और सेठ को प्रणाम करके कहा हे जिनभक्त सेठ! मैं वही पापी चोर का जीव हूँ, जिसे तुमने नमस्कार मंत्र उपदेश दिया था। उसी के प्रभाव से मैं सौधर्मस्वर्ग में महर्द्धिक देव हुआ हूँ। मैंने अवधिज्ञान द्वारा जब अपना पूर्वभवं का हाल जाना तब मुझे ज्ञात हुआ कि इस समय मेरे उपकारी पर बड़ी आपत्ति आ रही है, इसलिए मैं आया हूँ। यह सब कर्तव्य पूरा करने के लिए और आपकी रक्षा के लिए मैं आया हूँ। यह सब माया मुझ सेवक की ही की हुई है। इस प्रकार सब हाल सेठ से कहकर और रत्नमय भूषणादि से उसका यथोचित सत्कार कर देव स्वर्ग में चला गया। जिनभक्त धनदत्त की परोपकार बुद्धि और दूसरों के दुःख दूर करने की कर्तव्यपरता देखकर राजा वगैरह ने उसका खूब आदर सम्मान किया। सच है—

“धार्मिकः कैर्न पूज्यते” अर्थात् धर्मात्मा का कौन सत्कार नहीं करता? ॥२१-३५॥

राजा और प्रजा के लोग इस प्रकार नमस्कार मंत्र का प्रभाव देखकर बहुत खुश हुए और

श्रीमज्जैनविशुद्धशासनरता जाताः सुभक्त्या श्रिये
भव्यैश्चापि परैर्जिनेन्द्रकथिते धर्मेऽत्र कार्या मतिः ॥३६॥

इति कथाकोशे दृढसूर्यचोरस्य कथा समाप्ता ।

२४. यमपालचाण्डालस्य कथा

प्रणम्य श्रीजिनाधीशं शर्मदं धर्महेतवे। मातङ्गः पूजितो देवैस्तच्चरित्रं सतां ब्रुवे ॥१॥
वाणारस्यां महापुर्यां राजाभूत्याकशासनः। एकदासौ निजे देशे पीडां श्रुत्वातिदारुणाम् ॥२॥
शान्त्यर्थं कार्तिके मासे शुक्ले नन्दीश्वरोत्सवे। अष्टम्यादिदिनान्यष्टौ जीवामारिप्रघोषणाम् ॥३॥
दापयामास भूभर्ता प्रजानां हितकारकः। तदा श्रेष्ठिसुतः पापी सप्तव्यसनतत्परः ॥४॥
धर्मनामा महोद्याने राजकीयं च मेढ्रकम्। हत्वा प्रच्छन्नतः शीघ्रं भक्षयित्वा च तत्पलम् ॥५॥

पवित्र जिनशासन के श्रद्धानी हुए। इसी तरह धर्मात्माओं को भी उचित है कि वे अपने आत्महित के लिए भक्तिपूर्वक जिनभगवान् द्वारा उपदिष्ट धर्म में अपनी बुद्धि को स्थिर करें ॥३६॥

२४. यमपाल चाण्डाल की कथा

मोक्ष सुख के देने वाले श्री जिनभगवान् धर्म प्राप्ति के लिए नमस्कार कर मैं एक ऐसे चाण्डाल की कथा लिखता हूँ, जिसकी कि देवों तक ने पूजा की है ॥१॥

काशी के राजा पाकशासन ने एक समय अपनी प्रजा को महामारी से पीड़ित देखकर ढिंढोरा पिटवा दिया कि “नन्दीश्वरपर्व में आठ दिन पर्यन्त किसी जीव का वध न हो। इस राजाज्ञा का उल्लंघन करने वाला प्राणदंड का भागी होगा।” वही एक सेठ पुत्र रहता था। उसका नाम तो था धर्म, पर असल में वह महा अधर्मी था। वह सात व्यसनों का सेवन करने वाला था। उसे मांस खाने की बुरी आदत पड़ी हुई थी। एक दिन भी बिना मांस खाये उससे नहीं रहा जाता था। एक दिन वह गुप्त रीति से राजा के बगीचे में गया। वहाँ एक राजा का खास मेढ़ा बँधा करता था। उसने उसे मार डाला और उसके कच्चे ही मांस को खाकर वह उसकी हड्डियों को एक गड्ढे में गाड़ गया। सच है— व्यसनी मनुष्य नियम में पाप में सदा तत्पर रहा करते है ॥२-६॥

दूसरे दिन जब राजा ने बगीचे में मेढ़ा नहीं देखा और उसके लिए बहुत खोज करने पर भी जब उसका पता नहीं चला, तब उन्होंने उसका शोध लगाने को अपने बहुत से गुप्तचर नियुक्त किए। एक गुप्तचर राजा के बाग में भी चला गया। वहाँ का बागमाली रात को सोते समय सेठ पुत्र के द्वारा मेंढे के मारे जाने का हाल अपनी स्त्री से कह रहा था, उसे गुप्तचर ने सुन लिया। सुनकर उसने महाराज से जाकर सब हाल कह दिया। राजा को इससे सेठ पुत्र पर बड़ा गुस्सा आया। उन्होंने कोतवाल को बुलाकर आज्ञा की कि, पापी धर्म ने एक तो जीव हिंसा की और दूसरे राजाज्ञा का